THE ECONOMIC TIMES

Date: 20-09-24

All Together Now, Get The Scale of It Right

ET Editorials

The Union cabinet's approval for 'one nation, one poll' has set the ball rolling for what is, indeed, an ambitious venture. If the proposal is passed by Parliament, India will join an exclusive club. Only three countries — Belgium, Sweden and South Africa — have ONOP. As is obvious by this list, almost all challenges lie in managing scale.

ONOP isn't new to us. The first two decades of the Indian republic conducted simultaneous Lok Sabha and assembly elections. Till realpolitik caught up with democracy. Benefits from cost, accountability, even governance are obvious — on paper. But a foolproof plan with backups and contingencies to scenarios, such as a government unable to complete its term, are critical. And then there's implementation. This is India with its scale, spread and multiplicity one is talking about. And the reality of personnel and institutional coherence is often overlooked or underplayed in such grand plans. EC has shown year after year, its capability and capacity. But ONOP is a different ball game of a different scale and order. Ensuring the seamless movement of EC personnel and central forces for the entire electoral process, dealing with complaints, violations of model code of conduct, ensuring that EVMs are available and geared for the 2-3 sets of voting, all have to be hardwired into ONOP. Voter awareness is another big ask — ensuring that all voters are able to grasp, and transition to, a system to register their choice of central, state and local mandates.

India has pulled off many seemingly impossible efforts, such as vaccinating almost its entire population against Covid. It can do so with ONOP again. But it must first design and betatest both its 'software' and 'hardware' before trotting it out.

THE HINDU

Date: 20-09-24

Wrong notion

The idea of simultaneous elections is inherently anti-federal.

Editorial

Notwithstanding the opposition from political parties and many in civil society to the idea of simultaneous elections, the Union government has decided to accept the recommendations of a high-level committee headed by former President Ram Nath Kovind to go ahead with the scheme. The committee

envisaged simultaneous Lok Sabha and State Assembly elections as the first step, followed by municipal and panchayat polls within 100 days of the general election. In order to do so, the government would need to get constitutional amendments to be passed, in Parliament and in the State Assemblies. Two key reasons have been evinced for the proposal — first, the costs of conducting these elections would be significantly reduced if held together, and, second, not having simultaneous elections has kept political parties in prolonged campaign mode, impacting governance and legislative work. There has been little to no empirical data to support the first reason. Already, general elections take an inordinately long time, with some State polls being held in phases. Simultaneous elections could prolong this process. One of the committee's recommendations is that if a State Assembly gets dissolved before five years of its term, after the "appointed date" — the date for synchronising Lok Sabha and Assembly elections — fresh "midterm" elections will be held but the new Assembly's will not have a full five-year tenure. Its tenure will end five years from the "appointed date". This provision militates against the original idea of cost cutting through simultaneous elections. It is also an anti-federal idea.

In a multi-tiered governance system, people choose their representatives based on their perception of who is best suited. The power being demarcated for different levels of government allows for distinct roles for each representative and suggests varied voter choices that could be based on party affiliation, candidate strength, ideological positions or socio-economic reasons that are constituency-specific. Each tier has its exclusive importance and so does the related election. The second reason, that representatives are in perennial campaign mode and, therefore, polls to every tier should all be held during the same period, is problematic. For one, that national representatives of parties are forever in campaign mode is a consequence of the centralising tendencies of parties that are in power today and is not a reflection of the extant electoral democratic system. Second, subsuming multi-tier elections into simultaneous mode has the potential to reduce the importance of each tier, especially the Assembly and municipal/panchayat levels, and is anti-federal. Lastly, to effect this proposal, the tenures of quite a few State governments will have to be cut short. Parties and civil society actors committed to federalism must squarely reject this proposal by the Union government.

दैनिक भास्कर

Date: 20-09-24

एक देश-एक चुनाव से जुड़े भ्रम दूर करना जरूरी

संपादकीय

एक अध्ययन के अनुसार देश के हर 15 परिवारों में कम से कम एक व्यक्ति चुनावी प्रक्रिया में परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से सक्रिय है। यानी करीब करोड़ लोग विभिन्न स्तर पर या तो चुनाव लड़ते हैं, या लड़ाते हैं या कार्यकर्ता की भूमिका में रहते हैं। एक आम चुनाव में हफ्तों का समय और घोषित अघोषित करीब 1.50 लाख करोड़ रुपए खर्च होते हैं। विधानसभा चुनावों को शामिल कर लें तो यह राशि केंद्र द्वारा शिक्षा व स्वास्थ्य के

मद में किए जाने वाले कुल खर्च से ज्यादा होती है। कोविंद समिति के समक्ष पेश एक अध्ययन में बताया गया कि एक साथ चुनाव हुए तो जीडीपी में 1.5% की वृद्धि होगी । यह निष्कर्ष चुनावों के बाद और पहले की जीडीपी के तुलनात्मक अध्ययन से मिला। इसके अलावा देश के अनेक परस्पर विरोधी पहचान समूहों में विभाजित होने से चुनावों में या इसके बाद सामाजिक स्तर पर हिंसा और अपराध बढ़ जाते हैं, जिनकी सामाजिक क्षति के अलावा आर्थिक कीमत भी होती है । एक साथ चुनाव करने के खिलाफ यह कहना कि इससे क्षेत्रीय दल घाटे में रहेंगे, अतार्किक है क्योंकि टेक्नोलॉजी के इस युग में जन-संवाद सस्ता है। जहां तक इसे संघीय ढांचे में राज्यों की भूमिका के खिलाफ बताया जा रहा है, वह अतिरेक है। क्योंकि स्वायत्तता पर कहीं ज्यादा नुकसान और भी कारणों से हुआ है। विपक्ष को भी इसे सकारात्मक दृष्टि से देखना होगा।

दैनिक जागरण

Date: 20-09-24

बार-बार चुनाव के दुष्चक्र से निकले देश

डॉ. जगदीप सिंह, (लेखक राजनीतिशास्त्र के प्रोफेसर हैं)

गत दिवस एक देश-एक चुनाव के प्रस्ताव को केंद्रीय कैबिनेट ने मंजूरी दे दी। उम्मीद है कि इससे संबंधित बिल संसद के शीतकालीन सत्र यानी नवंबर-दिसंबर में पेश किया जाएगा। केंद्रीय मंत्री अश्विनी वैष्णव ने कहा कि पहले चरण में लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनाव साथ होंगे। इसके बाद 100 दिन के भीतर दूसरे चरण में निकाय चुनाव साथ कराए जाएंगे। एक देश एक चुनाव का मतलब है लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराना। मोदी सरकार ने अपने पिछले कार्यकाल में इस पर विचार के लिए पूर्व राष्ट्रपति राम नाथ कोविन्द के नेतृत्व में एक उच्चस्तरीय समिति बनाई थी। उसने इस साल के आरंभ में अपनी 18,626 पेज की रिपोर्ट राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मु को सौंपी थी। इस समिति को प्राप्त 21,558 सार्वजनिक प्रतिक्रियाओं में से 80 प्रतिशत से अधिक ने एक साथ चुनाव के विचार का समर्थन किया। 4,216 प्रतिक्रियाओं ने इसका विरोध किया। कोविन्द समिति ने सुझाव दिया है कि एक साथ चुनाव के लिए सभी राज्य विधानसभाओं का कार्यकाल अगले लोकसभा चुनाव यानी 2029 तक बढ़ाना होगा। चुनाव में किसी दल को बहुमत नहीं मिलने और किसी सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पास होने पर बाकी कार्यकाल के लिए नए सिरे से चुनाव कराने होंगे। चुनाव आयोग को लोकसभा, विधानसभाओं और निकाय चुनावों के लिए राज्य चुनाव अधिकारियों के परामर्श से एकल मतदाता सूची और मतदाता पहचान पत्र तैयार करना होगा। वांछित बदलावों के लिए संविधान में संशोधन की सिफारिश कोविन्द समिति ने दी है।

एक देश एक चुनाव के बारे में करीब 40 वर्ष पहले 1983 में पहली बार चुनाव आयोग ने सुझाव दिया था। 1951-52 में पहले लोकसभा चुनाव के साथ ही सभी विधानसभा चुनाव हुए थे। यह सिलसिला 1967 तक जारी रहा, लेकिन कई बार लोकसभा की अवधि कम होने, 1968 और 1969 में कई राज्यों में सरकारों को बर्खास्त किए जाने या राष्ट्रपति शासन लागू होने और नए राज्यों के गठन के साथ ही विभिन्न प्रदेशों में चुनाव का समय बदलता गया। चौथी लोकसभा भी समय से पहले भंग कर दी गई थी, जिसकी वजह से 1971 में फिर से आम चुनाव हुए। फलस्वरूप एक साथ चुनाव होने का चक्र बाधित हो गया। इस कारण हर साल देश के किसी न किसी राज्य में विधानसभा चुनाव होते रहते हैं। केंद्र सरकार के अलावा चुनाव आयोग की पूरी मशीनरी हर साल चुनावी मोड में ही रहती है, जिससे चुनाव वाले राज्यों में प्रशासनिक अधिकारी भी जनता के पूरे काम नहीं कर पाते। वर्तमान में हर साल करीब पांच-सात राज्यों के विधानसभा चुनाव होते हैं। 2015 में कार्मिक, सार्वजनिक शिकायत, कानून और न्याय पर संसद की स्थायी समिति ने कहा था कि देश में बार-बार चुनाव होने से सामान्य सार्वजनिक जीवन में व्यवधान होता है और जरूरी सेवाओं के कामकाज पर असर पड़ता है। चुनाव के चलते आचार संहिता लागू कर दी जाती है, जिससे लोक कल्याण की नई योजनाएं ठप हो जाती हैं। सरकार और राजनीतिक दलों को बड़े पैमाने पर धन खर्च करना पड़ता है। इसके अलावा काफी लंबे समय तक सुरक्षा बलों की तैनाती करनी पड़ती है।

एक साथ चुनाव के विचार के आलोचकों का कहना है कि मोदी सरकार का यह कदम राजनीति से प्रेरित है। क्षेत्रीय दलों को डर है कि वे अपने स्थानीय मुद्दों को मजबूती से नहीं उठा पाएंगे, क्योंकि राष्ट्रीय मुद्दे केंद्र में आ जाएंगे। इसके अलावा वे चुनावी खर्च और चुनावी रणनीति के मामले में भी राष्ट्रीय पार्टियों से मुकाबला नहीं कर पाएंगे। इससे मतदाताओं का व्यवहार इस रूप में प्रभावित हो सकता है कि वे राज्य के चुनाव के लिए भी राष्ट्रीय मुद्दों पर मतदान करने लगें। इससे बड़ी राष्ट्रीय पार्टियां लोकसभा और विधानसभा, दोनों चुनावों में फायदे में रहेंगी। इससे क्षेत्रीय पार्टियों के हाशिये पर चले जाने की आशंका है, जो अक्सर स्थानीय हितों का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनका मानना है कि प्रत्येक पांच साल में एक से ज्यादा बार मतदाताओं का सामना करने से नेताओं की जवाबदेही बढ़ती है और वे सतर्क रहते हैं।

आइडीएफसी संस्थान के 2015 में किए गए एक सर्वे में बताया गया है कि अगर एक साथ चुनाव होते हैं तो 77 प्रतिशत संभावना है कि मतदाता राज्य विधानसभा और लोकसभा में एक ही दल या गठबंधन को चुनेंगे। वहीं चुनाव छह महीने के अंतर पर होते हैं, तो 61 प्रतिशत मतदाता एक पार्टी को चुनेंगे। स्पष्ट है कि आलोचकों की आशंकाएं कोरी प्रतीत होती हैं। देश के मतदाता बहुत परिपक्व हैं। इसका परिचय उन्होंने बार-बार दिया है। कई बार ऐसा देखा गया है कि लोकसभा के साथ किसी विधानसभा के चुनाव होने पर मतदाताओं ने अलग-अलग दलों को चुना है। यह भी देखा गया है कि मतदाता केंद्र में किसी एक दल को प्रचंड बहुमत देते हैं, लेकिन कुछ ही माह बाद हुए राज्यों के चुनाव में किसी अन्य दल को सत्ता सौंपते हैं। दुनिया में जहां भी लोकतांत्रिक शासन प्रणाली है, उनमें से अधिकांश देशों में आम चुनाव और प्रांतीय चुनाव साथ ही होते हैं, जैसे अमेरिका, ब्रिटेन, ब्राजील, कोलंबिया, फिलीपींस, दक्षिण अफ्रीका और स्वीडन आदि। अब भारत में भी एक साथ चुनाव के विचार को कानूनी रूप देने का वक्त आ गया है। बार-बार चुनाव हमारे लोकतंत्र में एक दोष है। इसे

दूर किया जाना चाहिए। एक साथ चुनाव होने से केंद्र और राज्य की नीतियों और कार्यक्रमों में निरंतरता सुनिश्चित होगी। मतदान में वृद्धि होगी, क्योंकि लोगों के लिए एक बार वोट देने निकलना ज्यादा सुविधाजनक होगा। देश को भारी भरकम चुनावी खर्च से निजात मिलने के साथ गवर्नेंस में भी सुधार आएगा। इससे न सिर्फ विकास कार्य तेजी से होंगे, बल्कि खर्च भी बचेगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 20-09-24

स्मार्ट शहरः प्रभाव दिखाने के लिए होंगे तैयार!

विनायक चटर्जी, (लेखक बुनियादी ढांचा विशेषज्ञ हैं। वह द इन्फ्राविजन फाउंडेशन (टीआईएफ) के संस्थापक एवं प्रबंध न्यासी हैं और सीआईआई की राष्ट्रीय बुनियादी ढांचा परिषद के चेयरमैन भी हैं। लेख में टीआईएफ के सीईओ जगन शाह का भी योगदान रहा)

भारत के नीति निर्माताओं ने दशकों से विनिर्माण क्षेत्र में निवेश आकर्षित करने के भरपूर प्रयास कर रहे हैं। किंतु सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में विनिर्माण की हिस्सेदारी 16 से 18 प्रतिशत ही है, जो भारत की आजादी के 75वें वर्ष में 25 प्रतिशत के करीब पहुंचने की उम्मीदों से बहुत दूर है। हाल ही में इलेक्ट्रॉनिक्स, चिप निर्माण, बैटरियों आदि में बड़े पैमाने पर निवेश की घोषणाओं ने ध्यान आकृष्ट किया है। लेकिन कुल मिलाकर विनिर्माण निवेश में उल्लेखनीय वृद्धि की आवश्यकता नीतिगत चुनौती बनी हुई है।

पिछले कुछ वर्षों में सरकार ने पीएलआई (उत्पादन से जुड़े प्रोत्साहन) योजना, राष्ट्रीय लॉजिस्टिक्स नीति, गति शक्ति, क्लस्टर विकास, औद्योगिक गलियारे, कारोबारी सुगमता और आने वाले निवेश के लिए पूंजी सब्सिडी जैसे कई कदम आजमाए हैं। 12 औद्योगिक स्मार्ट शहरों के विकास की घोषणा को इन कोशिशों को दम देने की बड़ी पहल माना जा रहा है। 27 अगस्त को मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति ने 10 राज्यों के छह प्रमुख औद्योगिक गलियारों में 12 औद्योगिक स्मार्ट शहर विकसित करने के लिए 28,602 करोड़ रुपये के सार्वजनिक निवेश को मंजूरी दी है। ये शहर इन स्थानों पर होंगे:

- अमृतसर-कोलकाता औद्योगिक गलियारे पर पांच शहर: (पंजाब में राजपुरा-पटियाला, उत्तराखंड में खुरपिया, उत्तर प्रदेश में आगरा तथा प्रयागराज और बिहार में गया)

- दिल्ली-मुंबई औद्योगिक गलियारे पर दो शहर: (राजस्थान में जोधपुर-पाली और महाराष्ट्र में दिघी)
- विशाखापत्तनम-चेन्नई, हैदराबाद-बेंगलूरु, हैदराबाद-नागपुर और चेन्नई-बेंगलूरु के औद्योगिक गलियारों पर चार शहर (आंध्र प्रदेश में कोप्पार्थी और ओरवाकल, तेलंगाना में जहीराबाद और केरल में पलक्कड़)

आदर्श आचार संहिता लागू होने के कारण एक और शहर का नाम अभी तक जाहिर नहीं किया गया है।

इस तरह के प्रयास निस्संदेह संकेत देते हैं कि सरकार विनिर्माण में निवेश को बढ़ावा देने के निरंतर और ठोस प्रयास कर रही है। मगर इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि औद्योगिक स्थानों की उपलब्धता जरूरी तो है, लेकिन यही इकलौती शर्त नहीं है। इसलिए और भी अधिक सक्षम तंत्र उपलब्ध कराने के लिए पहले से मौजूद स्थानों के बजाय इन 12 नए स्थानों को ज्यादा प्रभाव दिखाना होगा। अधिक कारगर दिखने के लिए सात सुझाव दिए गए हैं।

प्लग ऐंड प्ले

ऐसा प्लग ऐंड प्ले माहौल होना चाहिए, जिसमें कारोबारी सुगमता के लिए जरूरी सभी प्रक्रियागत रियायतें हर हाल में मिलें। प्रत्येक स्थान पर सुविधा केंद्र अवश्य बनें,जो उन सुधारों को प्रत्यक्ष करके दिखाएं, जो नई दिल्ली में सत्ता के केंद्र से घोषित किए जाते हैं।

सामाजिक बुनियादी ढांचा

औद्योगिक क्षेत्रों में कर्मचारियों और उनके परिवारों की 'सामाजिक' आवश्यकताएं लंबे समय से उपेक्षित रही हैं। स्कूल, अस्पताल, पार्क से जुड़ी जमीन, रिटेल, घूमने की जगह और मनोरंजन सुविधाएं तैयार करने की एक समानांतर योजना को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। साथ ही इसे विकास के एजेंडा की योजना का अभिन्न हिस्सा बनाया जाए।

स्मार्ट यूटिलिटीज

21वीं सदी के मध्य में बने 'स्मार्ट' औद्योगिक शहरों में स्मार्ट यूटिलिटीज भी अवश्य शामिल होनी चाहिए। इनमें तरल और ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के साथ-साथ हरित ऊर्जा और उपलब्ध आईसीटी प्रौद्योगिकियों की पूरी व्यवस्था शामिल है।

एकीकरण और मिलान

इसका अर्थ है कि राष्ट्रीय एकल खिड़की व्यवस्था, एक जिला एक उत्पाद, सागरमाला, अमृत, स्मार्ट सिटी, स्वच्छ भारत, जल शक्ति, आवास योजना, कौशल विकास केंद्र, संशोधित विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) योजना, चैलेंज फंड सिटीज और अन्य ऊर्जा, दूरसंचार तथा सार्वजनिक परिवहन परियोजनाओं के बीच सहज रूप से

निर्बाध तालमेल बैठना चाहिए। कई माध्यमों वाली योजनाओं और अंतर्देशीय कंटेनर डिपो को भी इसमें शामिल किया जाना चाहिए।

अतीत की योजनाओं से सबक

दिल्ली-मुंबई औद्योगिक गलियारा विकास निगम (डीएमआईसीडीसी) ने पहली खेप में जिन सात औद्योगिक स्थलों का काम शुरू किया था, उनमें से धोलेरा और शेंद्रा-बिदकिन अभी तक पूरी क्षमता के साथ तैयार नहीं हो पाए हैं। इन परियोजनाओं को भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास, बुनियादी ढांचे के विकास में देर के साथ ही कई हितधारकों के बीच तालमेल की कमी से जूझना पड़ा है।

को-डेवलपर से निजी पूंजी

करीब 28,602 करोड़ रुपये के केंद्रीय आवंटन में से हर स्थान के लिए औसत आवंटन करीब 2,400 करोड़ रुपये बैठता है। माना जाता है कि राज्य सरकारें जमीन मुहैया कराएंगी और अपने हिस्से की पूंजी भी देंगी। लेकिन यह सब मिलकर बाहरी विकास के लिए पूंजी ही जुटा पाएंगे।

ऐसे में सार्वजनिक-निजी साझेदारी (पीपीपी) की रचनात्मक योजनाएं बनानी होंगी ताकि करोड़ों में निजी पूंजी आए और सामाजिक बुनियादी ढांचा विकास और परिचालन एवं प्रबंधन में मदद भी मिले। कुछ देश को-डेवलपर बनने में दिलचस्पी दिखा रहे हैं, जिस पर गंभीरता से काम होना चाहिए।

तटीय आर्थिक क्षेत्र (सीईजेड)

भारत में निर्यात के लिहाज से विनिर्माण में होड़ को बढ़ाने के लिए सीईजेड को अभी तक ज्यादा तवज्जो नहीं दी गई है। वर्ष 2015 में नीति आयोग के तत्कालीन प्रमुख अरविंद पानगड़िया ने चीन के उदाहरणों से प्रेरणा लेते हुए बड़े सीईजेड स्थापित करने के विचार की वकालत की, जिन्हें मुक्त व्यापार क्षेत्रों के रूप में वैसे ही तैयार किया जाए, जैसे वित्तीय क्षेत्र के लिए अहमदाबाद में गिफ्ट सिटी है। इन सीईजेड में नियामकीय झंझट नहीं होते और श्रम के अधिक इस्तेमाल वाले मूल्यवर्द्धित निर्यात में भारत के बड़े कदम के लिए यह सही आधार मुहैया कराते। इस सुझाव को आगे बढ़ाने में अभी देर नहीं हुई है।

भारत विशेष क्षेत्र तैयार कर विनिर्माण निवेश आकर्षित करने की कोशिश लंबे समय से करता रहा है। समाजवादी दौर में भी लगभग हर राज्य में औद्योगिक क्षेत्र तैयार हुए थे, जिनमें से कई आज जीर्ण-शीर्ण स्थिति में हैं। इसके बाद क्लस्टर विकास की कोशिश हुई और स्मार्ट सिटी के लिए पहल की गई।

निजी क्षेत्र इसमें कदम रखने के लिए तैयार था और महिंद्रा तथा श्रीसिटी इंडस्ट्रियल एनक्लेव उल्लेखनीय सफलता की मिसाल बने हुए हैं। डीएमआईसीडीसी ने सात नए स्थानों के लिए कोशिश की। सेज से जुड़ी

गतिविधियां काफी सुर्खियों में रहीं, लेकिन दुर्भाग्य से इसमें चूक दिखने लगी और डेवलपमेंट ऑफ एंटरप्राइज ऐंड सर्विस हब्स (देश) बिल, 2023 की पहल हुई। अब हमारे पास ये 12 औद्योगिक स्मार्ट शहर हैं।

कुल मिलाकर इन 12 औद्योगिक स्मार्ट शहरों को केंद्र और राज्य सरकारों से प्राथमिकता मिलनी चाहिए। लेकिन इन्हें पहले के प्रयासों की तुलना में अलग तरीके से देखा जाना चाहिए। इन्हें दमखम के साथ अधिक प्रभाव दिखाने का प्रयास करना चाहिए।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 20-09-24

विपक्ष की सहमति जरूरी

संपादकीय

देश में लोक सभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ कराने यानी एक देश, एक चुनाव के प्रस्ताव को केंद्रीय कैबिनेट ने मंजूरी दे दी है। उम्मीद है कि सरकार संसद के शीतकालीन सत्र में यह विधेयक लाएगी। लोक सभा, विधानसभा और स्थानीय निकाय के चुनाव एक साथ कराने का विचार बहुत अच्छा और प्रेरक है, लेकिन इसके क्रियान्वयन में बहुत जटिलताएं और मुश्किलें आ सकती हैं। चुनावों से जुड़े सभी हितधारक यानी सत्ता पक्ष, विपक्ष और चुनाव आयोग के बीच जब तक एक देश, एक चुनाव के मुद्दे पर आम सहमति नहीं बनेगी तब तक इसका क्रियान्वयन संभव नहीं है। वास्तव में इस मामले पर सत्ता पक्ष और विपक्ष, दोनों की अलग-अलग राय हैं। सरकार का मानना है कि अगर एक साथ चुनाव कराए जाएंगे तो सरकारी खजाने पर वित्तीय बोझ कम होगा क्योंकि बार-बार होने वाले खर्च से बचा जा सकेगा। जाहिर है कि देश में हर समय कहीं न कहीं चुनाव होते रहते हैं । इस कारण सरकार, राजनीतिक दलों और चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों पर भारी आर्थिक बोझ पड़ता है। आचार संहिता लागू होने के कारण विकास कार्य भी अवरुद्ध होते हैं। दूसरी ओर, कांग्रेस ने इस विचार को अव्यावहारिक बताया है। समाजवादी पार्टी, तृणमूल कांग्रेस, सीपीआई, डीएमके समेत करीब 15 दल इस प्रस्ताव के पक्ष में नहीं हैं। ऐसा नहीं है कि देश में पहली बार एक साथ चुनाव कराने पर चर्चा हो रही है। 1952, 1957, 1962 और 1967 में लोक सभा और विधानसभा के चुनाव एक साथ होते रहे हैं। उन दिनों केंद्र और अधिकांश राज्यों में कांग्रेस का ही शासन था। इसलिए कांग्रेस की इस धारणा से सहमत नहीं हुआ जा सकता कि एक देश एक चुनाव का विचार अव्यावहारिक है। हां, यह जरूर है कि एक साथ चनाव कराए जाने में मौसम बाधक बन सकता है। खराब मौसम के कारण चुनाव कराने वाले अधिकारियों और सुरक्षा बलों की आवाजाही में मुश्किलें पैदा हो सकती हैं। एक देश एक चुनाव को लेकर पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अध्यक्षता वाली समिति ने जो भी सिफारिशें की हैं, वे सभी लागू की जा सकती हैं लेकिन इसके लिए

विपक्षी दलों की सहमति आवश्यक है। इसीलिए आगामी दिनों में सरकार सभी राजनीतिक दलों से सहमति बनाने की कोशिश करेगी। बिना इस सहमति के इस विचार को जमीन पर नहीं उतारा जा सकता।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 20-09-24

चुनाव एक साथ कराने की चुनौतियां

ओपी रावत, (पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त)

केंद्रीय मंत्रिमंडल ने पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद की अगुवाई वाली समिति की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए 'एक देश, एक चुनाव' को मंजूर कर लिया है। संसद के शीतकालीन सत्र में इस बाबत बिल लाया जा सकता है। एक साथ पूरे देश में चुनाव कराने की जरूरत चुनाव आयोग भी काफी पहले से महसूस करता रहा है। उसने 1982 में तत्कालीन सरकार को लिखा भी था कि 1967 के बाद से चुनाव अलग-अलग हो रहे हैं, जिसके कारण निरंतर चुनाव की प्रक्रिया चलती रहती है, इसलिए जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम और संविधान में उचित संशोधन कर लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराने की व्यवस्था की जानी चाहिए। हालांकि, तब इस सुझाव पर राजनीतिक सहमति नहीं बन सकी और मामला जस का तस बना रहा।

एक देश, एक चुनाव की उम्मीद साल 2015 में फिर से जगी, जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस दिशा में आगे बढ़ने का भरोसा दिया। आज यदि मंत्रिमंडल ने इस पर सहमति जताई है, तो इसे सरकार की स्च्छिछ्छा कहेंगे। मगर इस दिशा में मजबूती से तभी बढ़ा जा सकेगा, जब संसद से जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम व 'संविधान में संशोधन विधेयक पारित कराया जाएगा। और, यह कोई आसान काम नहीं है। दरअसल, लोकसभा और विधानसभा के ही चुनाव एक साथ कराने की बात होती, तो जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम और संविधान में कुछ संशोधनों से यह काम हो जाता। मगर कोविंद समिति की अनुशंसा के मुताबिक, स्थानीय निकायों के चुनाव भी दूसरे चरण में 100 दिनों के अंदर कराने को कैबिनेट ने मंजूरी दी है, जबकि इन संस्थाओं के चुनाव राज्य सरकार के अधीन होते हैं। पेच यहीं पर फंसेगा। मुमकिन है कि एनडीए समर्थित सरकारें तत्काल अपने यहां संशोधन कर लें, लेकिन विपक्षी दलों वाली राज्य सरकारें भी ऐसा करेंगी, इस पर संदेह है। यह शक तब और गहरा जाता है, जब एक देश, एक चुनाव के विरोध में कांग्रेस, समाजवादी, तृणमूल, द्रमुक, आप जैसी करीब

15 पार्टियां खुलकर खड़ी हैं। केंद्र सरकार इस मामले में कोई एकतरफा कार्रवाई नहीं कर सकती, क्योंकि ऐसा करना राज्यों के विशेषाधिकार का हनन होगा और इससे हमारा संघीय ढांचा प्रभावित होता है।

चुनाव आयोग एक साथ पूरे देश में चुनाव कराने की जरूरत इसलिए महसूस करता रहा है, क्योंकि अभी उसे अनवरत चुनाव संबंधी कामों से जूझना पड़ता है। साल 2024 में ही पहले लोकसभा चुनाव हुए, अब जम्मू-कश्मीर व हरियाणा में मत डाले जा रहे हैं और वर्ष के आखिर में महाराष्ट्र, झारखंड और शायद दिल्ली में मतदान होंगे। चुनाव आयोग के पास बमुश्किल 300 कर्मचारियों की फौज है, इसलिए चुनाव के समय दिन-रात काम करना उनकी मजबूरी बन जाती है। जब कोई कर्मचारी साल भर दिन-रात काम करेगा, तो उसमें थकान होना स्वाभाविक है। इससे गलती होने की आशंका भी बढ़ जाती है, जबकि निष्पक्षता चुनाव की बुनियादी शर्तों में एक है।

चुनाव-प्रक्रिया में छोटी से छोटी गलती भी कितनी भारी पड़ सकती है, इसे ऑस्ट्रिया के चुनाव से समझ सकते हैं। वहां सरकार का कार्यकाल बस खत्म होने को था, तो चुनाव आयोग ने अपनी तैयारी शुरू की। मत-पत्र चिपकाने के लिए उसने जिस गोंद की खरीदारी की, उस पर लिखा था कि यह 30 डिग्री सेल्सियस तक काम करेगा। मगर जब चुनाव हुए, तो तापमान बढ़कर 35 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच गया और ऐन चुनाव के समय मत-पत्र खुलने लगे। इससे पारदर्शिता प्रभावित हुई और चुनाव रद्द करवाने पड़े। चूंकि, सरकार के पास बमुश्किल एक महीने का कार्यकाल बचा था, इसलिए आयोग के पास संसद में यह गुजारिश करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा कि संविधान में संशोधन करके चुनाव का वक्त आगे बढ़ाया जाए। स्थिति काफी खराब हो गई थी। अपने यहां अब तक ऐसी कोई नौबत नहीं आई है, जिसके लिए हमें चुनाव आयोग और उनके कर्मियों का धन्यवाद करना चाहिए, लेकिन जब थकान हावी हो जाए, तो कुछ भी हो सकता है। इसी चुनौती से पार पाने के लिए आयोग 1982 से ही एक साथ चुनाव कराने की मांग करता रहा है। यहां चुनाव आयोग की टीम बढ़ाने से भी कोई मदद नहीं मिल सकेगी, क्योंकि इससे आयोग की पारदर्शिता ही प्रभावित होगी और उसके लिए चुनौतियां बढ़ जाएंगी।

साफ है, हमें सोच-समझकर बढ़ना होगा। यदि कुछ राज्य सरकारें तैयार नहीं होती हैं, तो फिर जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम और संविधान में ऐसे संशोधन करने पडेंगे कि लोकसभा व विधानसभा चुनावों के तत्काल बाद स्थानीय निकायों के चुनाव कराने की मजबूरी न रहे। राज्यों को इस बाबत सिर्फ सलाह दी जाए, जिसे मानना या न मानना उनका विशेषाधिकार रहे। इसके बाद, लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराने के लिए जरूरी संशोधन किए जाने चाहिए। उचित यही है कि संशोधन संबंधी कोई मसौदा बनाते समय सभी राजनीतिक दलों को बातचीत की मेज पर बिठाया जाए और उनकी चिंताओं व आशंकाओं को दूर करते हुए' एक देश, एक चुनाव' पर आम सहमति बनाई जाए। संविधान संशोधन के लिए जरूरी दो-तिहाई बहुमत जुटाने के वास्ते ऐसा करना अनिवार्य होगा। इसके बाद ही ईवीएम की कमी या सुरक्षा बलों जैसी जरूरतों को पूरा करने की दिशा में आगे बढ़ा जाए।

हालांकि, एक और चुनौती इस राह में है। अब जनगणना की कवायद भी शुरू होने वाली है, जिसे कोरोना महामारी की वजह से टाल दिया गया था। इसमें करीब डेढ़ साल का वक्त लगता है, यानी 2026 तक इसके आंकड़े सामने आ सकते हैं। तब हमें इसके अनुसार नया परिसीमन भी करना होगा, जिससे दक्षिण के राज्यों को नुकसान होने का अंदेशा है और वे इसके खिलाफ अभी से लामबंद होने लगे हैं। अगर यह मुद्दा जोर पकड़ता है, तब 'एक देश, एक चुनाव' पर आगे बढ़ना मुश्किल हो सकता है।

ऐसे में, चुनाव आयोग को अभी यह सुझाव केंद्र सरकार को देना चाहिए कि कम से कम एक साल के सभी विधानसभा चुनाव साथ-साथ कराए जाएं। इसके लिए किसी संविधान संशोधन की जरूरत नहीं होगी, क्योंकि आयोग के पास छह महीने के अंदर के सभी चुनाव एक साथ कराने के अधिकार हैं। इसकी शुरुआत जम्मू-कश्मीर, हरियाणा, झारखंड, महाराष्ट्र व दिल्ली के चुनाव एक साथ कराकर की जा सकती थी। मगर ऐसा नहीं हो सका। फिर भी, अभी देर नहीं हुई है। कम से कम इस पर तो सहमति बनाई ही जा सकती है।